Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.shisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2023 SHISRRJ | Volume 6 | Issue 6
ISSN : 2581-6306
doi : https://doi.org/10.32628/SHISRRJ

संकल्पसूर्योदय नाटक में काव्य तत्त्व

आलोक कुमार ओझा
शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग, नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश।

डॉ0 देव नारायण पाठक
शोध निर्देशक, विभागाध्यक्ष संस्कृत विभाग, नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय, प्रयागराज,उत्तर प्रदेश।

Article Info
Publication Issue :
November-December-2023
Volume 6, Issue 6
Page Number : 227-232

Article History
Received : 02 Dec 2023
Published : 21 Dec 2023

शोध सारांश – संकल्पसूर्योदय नाटक एक प्रतीक नाटक है, जिसमें दस अंक है। जगत् में रस से तात्पर्य है–काव्य, नाटकादि के पठन, श्रवण या दर्शन से सहृदय के हृदय में उद्दीप्त तन्मयीभाव रूप आनन्द। यद्यपि यह आनन्द एक रूप ही हुआ करता है किन्तु विभिन्न आलम्बनों का आश्रयण करने के कारण इसके अनेक भेद किये जाते हैं। संकल्पसूर्योदय नाटक में प्रधान रस शान्त रस है। संकल्पसूर्योदय नाटक में वेंकटनाथ ने अलंकारों को यथोचित महत्त्व दिया है। मुख्य रूप से यमक, अनुप्रास, उपमा, श्लेष और रूपक आदि अनेक अलंकार उदाहरण प्राप्त होते हैं।

मुख्य शब्द – संकल्पसूर्योदय, काव्य, नाटक, रस, अलंकार, वेंकटनाथ, आत्मा, सुमति, श्रद्वा, विचारणा।

संकल्पसूर्योदय का परिचयः– संकल्पसूर्योदय नाटक एक प्रतीक नाटक है, जिसमें दस अंक है। जिसमें प्रथम अंक का नाम 'स्वपक्षप्रकाश' है। इसमें आत्मा को वैषयिक सुख से कितना भटकना पड़ता है इसका प्रतिपादन किया गया है। द्वितीय अंक का नाम 'परपक्षप्रतिक्षेप' रखा गया है। इसमें सुमति की सखी श्रद्धा और विचारणा द्वारा पुरुष को ठगने के लिए महामोह के द्वारा किये गये प्रयत्नों का वर्णन किया गया है। तृतीय अंक का नाम 'मुत्तयुपायारम्भ' है। अंक के प्रारम्भ में विष्कम्भक का प्रयोग किया गया है। विवेक के द्वारा मुक्ति के उपाय का निरूपण करने के लिए पहले राग, द्वेष आदि. का प्रवेश कराया गया है। कवि ने चतुर्थ अंक का नाम 'कामादिव्यूहभेद' रखा है। समाधि आरम्भ करने वाले पुरुष का चित्त पूर्वानुभूत विषय वासनाओं से कलुषित रहता है और समाधि स्थिरता नहीं प्राप्त करता। वह सांसारिक भोगों की पुनः अभिलाषा करता है। परन्तु योगी कुछ समय तक वैषयिक सुख का अनुभव करके दोष देखकर पुनः इससे विरक्त हो जाता है। पंचम अंक का नाम 'दम्भादिउपालम्म' है। इस अंक में पुरुष अपनी समाधिनिष्ठता की प्रसिद्धि करना चाहता है और इस प्रकार दम्भ का आश्रय ग्रहण करता है। दर्प भी दम्भ की सहायता लेता है। इसकी सिद्धियों से अन्य लोग ठगे जाते हैं। प्रतारित जन इसे प्रभूत धन देते है। षष्ठ अंक का नाम 'स्थान–विशेष–संग्रह' है। 'विष्कम्भक' में ही सभी पुष्य तीर्थो के कलिकाल से प्रदोषित होने के कारण हेयत्व बताकर हृदयगुहा ही योग के लिए उचित स्थान है, यह निर्णय दिया जाता है। सप्तम अंक का नाम 'शुभाश्रय निर्धारण' है। इसमें हृदयकमल रूप योगासन पर भगवान् के ध्यान के प्रकार का वर्णन किया गया है। अष्टम अंक का नाम 'मोहादिपराजय' है। व्यूहभेद से पराजित कामादि, दुर्वासना और अभिनिवेश से उत्तेजित होकर

Copyright © 2023 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)** which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium for non-commercial use provided the original author and source are credited.

स्थिर समाधि वाले पुरुष के चित्त को फिर विषयाभिमुख करने की तैयारी करते है। नवम अंक का नाम 'समाधिसम्भव' है। अब विवेक द्वारा मोहादि के पराजित हो जाने पर पुरुष की भक्ति प्रवणता और अधिक बढ़ती है। किन्तु कर्म नाम्नी अविद्या विनवट कामादिक को फिर कुछ–कुछ उठाती है। दशम अंक का नाम 'निःश्रेयसलाभ' है। इस अंक में समाधिसिद्ध पुरुष से उपासना के कारण भगवान् प्रसन्न होते हैं। अर्चिरादि मार्ग से योगी को परमपद की प्राप्ति होती है। वहां पर ब्रह्मसायुज्य नामक मुक्ति को प्राप्त करने वाले पुरुष को निरतिशय ब्रह्मानन्द का अनुभव होता है। अन्त में कवि इस नाटक का समर्पण भगवान् वासुदेव के सम्मुख करता है।

संकल्पसूर्योदय में रस :– साहित्य जगत् में रस से तात्पर्य है – काव्य, नाटकादि के पठन, श्रवण या दर्शन से सहृदय के हृदय में उद्दीप्त तन्मयीभाव रूप आनन्द। यद्यपि यह आनन्द एक रूप ही हुआ करता है किन्तु विभिन्न आलम्बनों का आश्रयण करने के कारण इसके अनेक भेद किये जाते हैं। आलम्बन भेद के कारण आश्रय में भिन्न–भिन्न प्रकार के अनुभाव तथा संचारीभाव उत्पन्न होते हैं जिन्हें पढने या देखने से सहृदय पाठक या दर्शक के हृदय में अनेक प्रकार की आनन्दमयी अनुभूतियां हुआ करती हैं। इन्हीं अनुभूतियों को हम रस कहते हैं। रसों की संख्या के विषय में भी विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान् – शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स और अद्‌भुत नामक आठ रस ही मानते हैं[i]। तो कुछ विद्वान् शान्त को भी नवम रस के रूप में स्वीकार करते है[ii]।

शान्त रस :– संकल्पसूर्योदय नाटक में प्रधान रस शान्त रस है। वीर आदि उसके अंग के रूप में आए है। वेंकटनाथ के अनुसार शान्त रस ही त्रिवर्गनिष्ठ कोमल चित्त व्यक्तियों की प्रीति के लिए रसान्तर शृंगार आदि रूप में परिवर्तित हुआ करता है। वही सर्वगुण सम्पन्न शान्त रस इस नाटक में स्थित है[iii]। जिसका उदाहरण इस प्रकार है–

शमधन निधिं सत्वप्रायंप्रयोगमयोज्ञिनः
स्वगुणवशतः स्तोतुं यद्वा वरीव्रत निन्दितुम्।
किमिह बहुभिः किं नश्छिन्नं विश्वमनीश्वरं
तदुपनिहिता जाग्रत्येत्रं चतुर्देशसाक्षिणः।। सं0सू0 1/23

'संकल्पसूर्योदय' नाटक में कुछ अन्य रस भी उद्‌भावित हुए हैं। नाटक में शृंगार, वीर, करुण, हास्य, रौद्र, वीभत्स इत्यादि रसों का भी नाटककार ने यथावसर सफलता पूर्वक संयोजन किया है।

शृंगार रस :– प्रायः सभी विद्वानों ने शृंगार को रसराज माना है। इसकी उपेक्षा करके किसी कवि का काव्य साहित्य जगत् में लब्धप्रतिष्ठ हो सकना सन्देहास्पद है–

रम्यदेश कलाकाल वेषभोगादि सेवनैः।
प्रमोदात्मा रतिः सैव यूनोरन्योन्यरक्तयोः।।
प्रहृष्टमाना शृंगारो मधुराङ्‌गविचेष्टितैः ।। दशरूपकम् 4/48

शृंगार रस का उदाहरण भी संकल्पसूर्योदय में देखा जा सकता है, जिसका नाटककार ने यथावसर प्रयोग किया है। नाटक में क्रोध कहता है कि संसार के सो जाने पर शास्त्र रूपी अन्तःपुर में जाकर मुनि शान्ति के ब्याज से शृंगार शास्त्र का ही अनुशीलन करता है। उसका आत्मज्ञान महल है, शुभगुणों का समूह अलङ्‌करण है, समाधि सम्भोग है एकान्त में जप रति कथा है।

स्वसम्बोधः सौधः शुभगुणगणो मण्डन विधिः
समाधिः सम्भोगो रह सिज परौली रति कथा।।
सुषुप्ते लोकेऽद्य श्रुतिपरिषदत्तः मुरगतोमुनिः
शान्तिब्याजान्मुखरयति शृंगार निगमम् ।। सं0 सू0–4/57

वीर रस :– प्रस्तुत नाटक में वीर रस का भी प्रसंग आया है।

वीरः प्रताप विनयाध्यवसाय सत्तव

मोहाविषाद नयविस्मय विक्रमाद्यैः।
उत्साहभूः स च दयारणदान योगात्
त्रेधा किलात्र मतिगर्व धृति प्रहर्षाः ।। दशरूपकम् 4/72

संकल्पसूर्योदय नाटक में प्रसंग आया है कि विवेक, सेनापति, गुरू और शिष्य के परामर्श काल में कोई नेपथ्य से कहता है कि चार्वाक, बौद्ध, जैन आदि वेद वाह्य सिद्धान्त वालों के साथ अपने पौरुष की परीक्षा करने वाला न्याय, व्याकरण आदि शास्त्रों का सम्यक् ज्ञाता मैं बीच सभा में ललकार कर कहता हूँ कि आसेतुहिकाचल शास्त्रार्थ करने के लिए आने वाले प्रतिद्वन्दियों को तूल या तृण क्या तुषकण्डिका के बराबर भी नहीं समझता हूँ[iv]।

रौद्र रस :– संकल्पसूर्योदय नाटक में नाटककार ने रौद्र रस का बड़ा ही सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है। किसी पुरुष में क्रोध देखकर जब रौद्र रस की चवर्णा सहदयों को होने लगती है तो क्रोध ही यदि क्रुद्ध होकर युद्ध के लिए प्रवृत्त हो तो सहृदय भी भावमग्न होने के कारण ताल ठोंककर खड़े हो जायें तो क्या आश्चर्य? वेंकटनाथ के ही शब्दों में दर्शनीय है –

रुन्धानः सिन्धुघोषप्रथनमनिभृतं क्रन्दमन्दमाधरेन्द्रान्
भिन्दानः स्कन्धमेदान्सुरपथरथिनां शुष्मणः सारथीनाम्।
शुद्धालोकेन सद्यः क्षयमुपगमितः क्षान्तिमन्दस्मितेन
क्षुभ्यद्वैधात्रसौध ध्वनिगुणितरवः कोऽपि कोपादृहासः ।। सं0सू0 8/21

भयानक रस :– संकल्पसूर्योदय नाटक में भयानक रस का रमणीय स्थल अनुसन्धेय है। काम घबड़ाकर चारों ओर देखते हुए कहता है कि हम लोगों को अब पीछे की ओर पैर बढ़ाना चाहिए। क्योंकि आज शक्ति सम्पन्न होकर विवेक हमारे व्यूह का भेदन कर रहा है। इस पर बसन्त कहता है कि तुम तीनों (काम, क्रोध, लोभ) में से यदि किसी का अनिष्ट हुआ तो सब सत्यानाश हो जायेगा। उक्त स्थल वेंकटनाथ के ही शब्दों में पढ़ने योग्य हैं।

अनिद्राण प्रज्ञा सहज बलधीराद्भुतगति–
स्तिार्तक्षा सन्तोषस्थिरतरतनुत्राण्घटितः।
प्रयुक्तं केनापि प्रणवरयमास्थाय पुरतो
विवेकः प्रत्युद्यन् विद्यरटयति में व्यूह घटनाम् ।। सं0सू0 4/58

संकल्पसूर्योदय में अलङ्कार :– प्रस्तुत नाटक में वेंकटनाथ ने अलंकारों को यथोचित महत्त्व दिया है। अलङ्कार शब्द की व्युत्पत्ति है – 'अलङ्करोति इति अलङ्कारः'। इसके अनुसार शरीर को विभूषित करने वाले अर्थ या तत्व का नाम अलङ्कार है। जिस प्रकार कटक, कुण्डल आदि आभूषण शरीर को विभूषित करते हैं, इसलिए अलङ्कार कहलाते हैं। उसी प्रकार काव्य में अनुप्रास, उपमा आदि काव्य के शरीर भूत शब्द और अर्थ को अलङ्कृत करते हैं, इसलिए अलङ्कार कहलाते है।

अनुप्रास अलङ्कार :– वर्णों की समानता (आवृत्ति का नाम) अनुप्रास[v] हैं। स्वरों का भेद होने पर केवल व्यंजनों की समानता ही यहाँ वर्णो की समानता से अभिप्रेत है। रसादि के अनुकूल वर्णों का प्रकृष्ट सन्निवेश ही ''अनुगतः प्रकृष्टश्च न्यासः'' इस व्युत्पत्ति के अनुसार अनुप्रास कहलाता है। वर्णों की यह आवृत्ति शब्द के आदि, अन्त या मध्य में भी हो सकती है। अनुप्रास अलङ्कार के दो प्रमुख भेद है– छेकानुप्रास और वृत्यनुप्रास।

अनेक व्यंजनों का सकृत् अर्थात् एकबार सादृश्य छेकानुप्रास है तथा एक वर्ण का या अनेक व्यजनों का एक बार या बहुत बार का सादृश्य अर्थात् आवृत्ति वृत्यनुप्रास होता है[vi]। छेकानुप्रास में व्यंजनों की सकृदावृति होने के कारण उतना अधिक चमत्कारित्व नहीं आता है,
जितना कि वृत्यनुप्रास में आता है।

भूपसीरपि कलाः कलंकिताः
प्राप्य कश्चिदपचीपते शनैः।
एकमापि कलया विशुद्धया योऽपि
कोऽपि भजते गिरीशताम् ।।

इस श्लोक में क. ल, च, क, प, भ आदि व्यंजनों की सकृदावृत्ति होने के कारण छेकानुप्रास है।

वृत्यानुप्रास का उदाहरण :–

निकटेषु निशामयामिनित्यं
निगमान्तैरधुनाऽपि मृग्यमाणम्।
यमलाजुर्नदृष्ट वालकेलिं
ममुनासाक्षिकं यौवनं युवानम् ।। सं0सू0 7/75

सुन्दर पदावली सम्पृक्त प्रसाद गुण पूर्ण श्लोकों में व और न की असकृत् आवृति अत्यंत ही मनोहारी रूप में वर्णित है। प्रस्तुत श्लोक को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि इस नाटक में वेंकटनाथ ने अनुप्रास अलंकार के प्रयोग में प्रवीणता प्राप्त की थी।

यमक अलङ्कार :– काव्यप्रकाश में मम्मट ने इसके लक्षण में कहा है कि अर्थ होने पर (नियमेन) भिन्नार्थक वर्णों की उसी क्रम से पुनः श्रवण यमक नामक अलङ्कार कहलाता है[vii]।

नाथाश्लेषसनाथनश्रुति वधूवैधव्यखेदाच्छदं
व्यासो हास रसोचितो विगलितः प्राचीकशन्नैषचेत्
प्राचीनां नयपद्धति यतिपतिः प्राचेतसश्चेतसः
क्लृप्तः केलिशुकश्शुकस्य मुधा बाधाय बोधायनः ।। सं0सू0 2/46

श्लेष अलङ्कार :– अर्थ का भेद होने से भिन्न–भिन्न शब्द (समानाकार होने से) एक साथ उच्चारण (रूप दोष घटित सामग्री) के कारण जब परस्पर मिलकर एक हो जाते है तब वह श्लेष अलङ्कार होता है। संकल्पसूर्योदय नाटक में श्लेष अलङ्कार के अनेक सुन्दर स्थल विद्यमान हैं।

निर्धूत निखिल दोषानिखधि
पुरुषार्थ लम्भन प्रवणा ।
सत्कविभणितिरिव त्वं
सगुणालंकार भावर स्नजुष्टा ।। सं0सू0 1/64

पुनरुक्तवदाभास अलङ्कार :– श्री मम्मट ने काव्यप्रकाश में इस अलङ्कार के विषय में लिखा है कि भिन्न रूप से कहीं–कहीं दोनो सार्थक और कही दोनों या एक के अनर्थक शब्दों में आपाततः समानार्थकता की प्रतीति जहाँ होती है वहाँ पुनरुक्तवदाभास अलङ्कार होता है[viii]। तथा वह शब्द तथा अर्थ दोनों में रहने वाला होता है। संकल्पसूर्योदय में इसका उदाहण विद्यमान है –

सारः सारस्वतानां शठरिपुभणितिः शान्तिशुद्धान्तसीमा
मायामायामिनीभिः स्वगुणवितति भिर्वन्धयन्ती धयन्तीं ।
पारंपारंपरीतो भवजलधि भवन्मंज्जनानां जनानां
प्रत्यक्प्रत्यक्षयेन्नः प्रतिनियत रमासंनिधानं निधानम् ।। सं0सू0 – 6/61

यहां सारःसार इत्यादि पदों में आपाततः एकार्थ प्रतीति हो रही है अतः यहां पुनरुक्तवदाभास अलङ्कार हैं।

उपमा अलङ्कार :–काव्यप्रकाशकार मम्मट ने उपमा के लक्षण में लिखा है कि उपमान और उपमेय का भेद होने पर उनके साधर्म्य का वर्णन उपमा अलङ्कार कहलाता है[ix]। संकल्पसूर्योदय में उपमा के अनेक उदाहरण वेंकटनाथ ने दिया है। जिसमें यहाँ कुछ प्रस्तुत है–

पत्यौ दूरं गतवति रवौ पद्मनीव प्रसुप्ता
म्लानाकारा सुमुखि निभृता वर्तते बुद्धिरम्बा ।।
माया योगान्मलिनित रुचौ वल्लभे तुल्यशीला
राहुग्रस्ते तुहिनकिरणे निष्प्रभायामिनीव ।। सं0सू0 1/74

अपने स्वामी सूर्य के दूर चले जाने पर संकुचित कमलिनी के समान बुद्धि अपने पति के दूर चले जाने पर (जड़ता आ जाने के कारण) निश्चेष्ट हो गयी है। चन्द्रमा के राहुग्रस्त हो जाने पर निष्प्रभ रात्रि के समान माया के सम्पर्क से मलिनकान्ति (तिरोहित आनन्दप्रकाशदि) पति–पुरुष में (बुद्धि) समान आचरण करती है। यहाँ बुद्धि को कमलिनी और यामिनी के समान बताया गया है, अतः यहाँ उपमा अलङ्कार है।

उत्प्रेक्षा अलङ्कार :– मम्मटाचार्य ने अपनी पुस्तक काव्यप्रकाश में उत्प्रेक्षा के लक्षण में लिखा है कि प्रकृत अर्थात् वर्ण्य उपमेय की सम अर्थात उपमान के साथ सम्भावना उत्प्रेक्षा कहलाती है[x]। संकल्पसूर्योदय के षष्ठ अंक के इस श्लोक में उत्प्रेक्षा का लक्षण प्रकट होता है –

प्रत्यङ्गकम्पपरिनर्तित कंचुकेऽस्मिन्न्
पर्याप्तरुढपलिते परतन्त्रपिण्डे ।
अक्षीणरागमजराभर जीविताशं
मामेव हन्त हसतीव ममान्तरात्मा।। सं0 सू0 6/4

रूपक अलङ्कार :– काव्यप्रकाश में इसका लक्षण प्रस्तुत है जिसमें कहा गया है कि– अत्यन्त सादृश्य के कारण प्रसिद्ध भेद वाले उपमान और उपमेय का अभेद वर्णन रूपक अलङ्कार कहलाता है[xi]। रूपक अलङ् कार के उदाहण वेंकटनाथकृत संकल्पसूर्योदय में दृष्टिगत है यथा–

क्वापि कल्पान्तवेशन्ते खुरदहने समुद्धताम्।
वहते मेदिनीमुस्तां महते पोत्रिणे नमः।। सं0सू0 7/29

खुरप्रमाणे प्रलयोदधौ समुद्धतां मेदिनीरूपा मुस्तां तृणकन्दविशेषं बहते महते पोत्रिणे महावराहाय नमः। अत्रोदद्योः पल्वलत्वेन रूपणम्।

समासोक्ति अलङ्कार :– इस अलङ्कार के विषय में कहा गया है कि प्रकृत अर्थ के प्रतिपादक वाक्य के द्वारा श्लेषयुक्त विशेषणों के प्रभाव से न कि विशेष्य (पद) के सामर्थ्य से जो अप्रकृत का कथन है वह समाप्त से अर्थात् संक्षेप से (प्रकृत तथा अप्रकृत रूप) दोनों का कथन होने से समासोक्ति अलङ्कार कहलाता है[गपप] संकल्पसूर्योदय में इसका उदाहरण आया है.–

मुकुलयति वितित्सां मोहविध्वंसमिच्छन्
विमृशति निगमान्तान् वीक्षते मोक्षधर्मान्।
निशमयति च गीतां नित्यमेकान्तभक्तया
गुणपरिषदवेक्षीगुप्तमन्त्रो विवेकः।। सं0सू0 1/61

निदर्शना अलङ्कार :– काव्यप्रकाशकार के अनुसार जहाँ वस्तु का असम्भव या अनुपद्यमान सम्बन्ध (प्रकृत की अप्रकृत के साथ) उपमा का परिकल्पक होता है वह निदर्शना अलङ्कार होता. है[xiii]। प्रस्तुत नाटक में इस अलङ्कार का उदाहरण देखा जा सकता है।–

सौहार्दमित्थमनवाप्य सहोदराणा–

मासीत्स्वमूलगुण भेदवशाद्विरोधः।
एक प्रजापति भुवामपि वैरवन्धः
स्वात्मावधिः स्वयंमुदेति सुरासुराणाम्।। सं0सू0 1/48

विनोक्ति अलङ्कार :– मम्मट ने इस अलङ्कार के लक्षण में लिखा है कि जहाँ दूसरे के बिना दूसरा अर्थ सुन्दर न हो अथवा असुन्दर न हो वहाँ विनोक्ति अलङ्कार होता है[xiv]। संकल्पसूर्योदय में इसका उदाहरण देखें–

सौवाकृतिस्तव त एव गुणानुभावाः
स्पादेव सागर सुता लिखिता त्वमेव।
शिंजान मंजुमठि नुपूरमेखलस्ते
संचार एष चतुरो यदि नान्तरायः।। सं0 सू0 7/26

परिकर अलङ्कार :– काव्यप्रकाशकार के अनुसार अभिप्राययुक्त विशेषणों के द्वारा जो किसी बात का कथन करना है वह परिकर अलङ्कार कहलाता है[xv]। प्रस्तुत नाटक में इस अलङ्कार का उदाहरण है –

सत्त्वस्थान्निभृतः प्रसादय सतां वृत्ति व्यवस्थापय
त्रस्यब्रह्ममविदागसस्तृणमिव त्रैवर्गिकान्भावय।
वनित्ये शेषिणी निक्षिपन्निजभरं सर्वसहे श्रसखे
धर्म धारय चातकस्य कुशलिन् धाराधरैकान्तिनः।। सं0सू0 2/38

सन्दर्भ

---

[i] श्रृंगार हास्यकरूणरौद्रवीर भयानकाः। वीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृता। भ0ना0 6/15

[ii] निर्वेद स्थायिभावोऽसित शान्तोऽपिनवमो रसः। का0प्र० 4/35

[iii] ललितमनसां प्रीत्यै विभ्रद्रसान्तभूमिकामानवमगुणो यस्मिन्नाट्ये रसो नवमः स्थितः। सं0सू0 1/3

[iv] तर्कव्याकृतितन्त्रशिक्षितधियः पक्षेषुबाहेष्वपि प्रतयक्षीकृतपौरूषा वयममी मध्येसमं ब्रूमहे।
वादाटोपमुपेयुषः प्रतिभटानासेतुहिमाचलं तूलायपि तृणाय वा न च तुषच्छेदायमन्यामहे। सं0सू0 2/42

[v] वर्णसाम्यमनुप्रासः। का०प्र० 9/79

[vi] सोऽनेकस्य सकृत्पूर्वः एकस्याप्यसकृत्परः। का०प्र० 9/79

[vii] अर्थेसत्यर्थ भिन्नानां वर्णनां सा पुनः श्रुतिः यमकम्। का0प्र० 9/83

[viii] पुनरुक्तवदाभासो विभिन्नाकारशब्दगा। का०प्र० 9/86

[ix] साधर्म्यमुपमा भेदे। का0प्र0 10/87

[x] सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्। का०प्र० 10/92

[xi] तद्रुपकमभेदो य उपमानोपमेययोः। का०प्र० 10/93

[xii] परोक्तिर्भेदकैः श्लिष्टैः समासोक्तिः। का०प्र० 10/97

[xiii] निदर्शना अभवन् वस्तुसम्बन्ध उपमापरिकल्पकः। का०प्र० 10/97

[xiv] विनोक्तिः सा विनाऽन्येन यत्रान्यः सन्न नेतरः। का0प्र0 10/113

[xv] विशेषणैर्यत्साकूतैरूक्तिः परिकरस्तु सः। का0प्र0 10/118